**ओ३म्**

**“ईश्वर में निहित चार वेदों का ज्ञान सृष्टि के आरम्भ**

**में लोक कल्यार्थ ईश्वर से ऋषियों को मिला है”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

वेद ज्ञान को कहते हैं। वेद इस सृष्टि के आदि काल में प्राप्त ज्ञान हैं। यह संहिता रूप में है जो आज भी उपलब्ध हैं। अनुमान है कि चार वेद प्रायः सभी सक्रिय आर्य समाज के सदस्यों के यहां उपलब्ध हैं। प्रश्न है कि वेदों के ज्ञान को किसने कब व कैसे उत्पन्न किया? इसका सरल उत्तर तो यह है कि जिस ज्ञानवान सत्ता में वेद ज्ञान विद्यमान था, उसी के द्वारा यह प्राप्त हो सकता है। हम मनुष्य की आत्माओं को अपने ज्ञान नेत्रों से देखते हैं। मनुष्य से इतर योनि में जो आत्मायें हैं उनसे तो ज्ञान की उत्पत्ति किसी प्रकार से सम्भव नहीं है। मनुष्यों में भी ज्ञान स्वतः उत्पन्न नहीं होता अपितु उन्हें माता-पिता व आचार्यगणों से भाषा व अन्य विषयों का ज्ञान मिलने पर वह अपनी प्रतिभा व बौद्धिक क्षमता से उसमें कुछ न्यूनाधिक्य कर सकते हैं। अतः सभी सत्य विद्यायों से युक्त चार वेद किसी मनुष्य की कृति वा रचना नहीं हो सकते। यह तो किसी मनुष्य से भी उत्कृष्ट ज्ञानवान सत्ता से ही उत्पन्न हो सकते हैं। उस सत्ता का पता किससे ज्ञात हो सकता है? उसका पता या तो हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों के ग्रन्थों से हो सकता है अथवा वेदों से ही पूछने पर मिल सकता है। ऋषि दयानन्द वेदों के महाभारत काल के बाद उत्पन्न सभी विद्वानों में श्रेष्ठतम विद्वान थे। यह बात ऋषि दयानन्द के जीवन चरित्र व उनके अन्य प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, उपदेशमंजरी, उनके पत्रव्यवहार आदि से स्पष्ट होती है। उन्होंने इन प्रश्नों के उत्तर वेद से ही दिये हैं। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के सातवें समुल्लास में अथर्ववेद के 10/23/4/20 मंत्र **‘यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्। सामानि यस्य लोमान्यथर्वांगिरसो मुखं स्कम्भन्तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः।।’** को प्रस्तुत कर इसका हिन्दी अर्थ दिया है। इसका अर्थ बताते हुए वह कहते हैं कि परमात्मा से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद प्रकाशित हुए हैं। वह परमात्मा सब (जड़ चेतन जगत) को उत्पन्न करके धारण कर रहा है। इसके आगे उन्होंने यजुर्वेद के 40/8 मंत्र **‘स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।’** इस मन्त्र भाग को प्रस्तुत कर इसका अर्थ दिया है जिसमें बताया है कि परमात्मा वा ईश्वर स्वयम्भू, सर्वव्यापक, शुद्ध, सनातन, निराकार है। वह परमात्मा अपनी सनातन जीव(आत्मा)रूप प्रजा के कल्याणार्थ यथावत् रीतिपूर्वक वेद द्वारा सब विद्याओं का उपदेश करता है। वेदों में जो कहा है व ऋषि दयानन्द ने वेद का जो तात्पर्य हिन्दी में दिया है वैसा ही समस्त प्राचीन वैदिक ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। तर्क व बुद्धि से भी यह सिद्ध होता है कि जड़ व चेतन सृष्टि की उत्पत्ति व आदि सृष्टि में मनुष्यों को वेद ज्ञान जिस ज्ञानवान चेतन सत्ता से प्राप्त हो सकता है वह सच्चिदानन्द, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ सत्ता से ही हो सकता है। अतः ऋषि के कथन सर्वथा विश्वसनीय एवं माननीय है। देश व विश्व के सभी वैज्ञानिक अभी इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते हैं। हमारा विश्वास है कि भविष्य में उनके भ्रम दूर होंगे और वह अवश्य इस वैदिक सत्य मान्यता को स्वीकार करेंगे।

वेदों में जो मन्त्र हैं उसमें कोई बात अनुमान व किसी अन्य की साक्षी से नहीं कही गई है अपितु सभी ज्ञान व विज्ञान की बातें निश्चयात्मक ज्ञान के आधार पर कही गई हैं। यजुर्वेद में कहा गया है **‘ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंचजगत्यां जगत।’** अर्थात् यह समस्त संसार इस सृष्टि के रचयिता ईश्वर से सर्वत्र व्याप्त हो रहा है। इसका अर्थ है कि ईश्वर इस समस्त सृष्टि में सर्वव्यापक रूप से विद्यमान है अर्थात् ईश्वर ब्रह्माण्ड में सर्वत्र है। ईश्वर सर्वव्यापक है, यह बात सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर द्वारा बताये बिना किसी मनुष्य के द्वारा अपने स्वोपार्जित ज्ञान के आधार पर नहीं कही जा सकती। वर्तमान में वेदज्ञान से अनभिज्ञ मनुष्य को ईश्वर व वेदज्ञान विषयक प्रश्नों के हल ढूंढने के लिए उसे अनेक सम्भावनाओं पर विचार करना होगा और तब अनेक प्रकार के विचारों की परीक्षा करने के बाद ही वह वो बात कह सकता है जो कि वेद में कही गई है। प्राचीन काल में आदि मनुष्यों के सामने ऐसा अनुमान करने के लिए न तो कोई भाषा थी और न विचार थे। अतः उस समय ईश्वर ने एक पिता व आचार्य की भांति कृपा करके आदि मनुष्य-ऋषियों को सभी आवश्यक विषयों का निश्चयात्मक सत्य ज्ञान चार वेदों के रूप में प्रदान किया था। वेद और वेद की भाषा दोनों ही महत्वपूर्ण हैं और दोनों ही सृष्टि की आदि में ईश्वर से ही प्राप्त हुईं हैं। ज्ञान भाषा में ही विद्यमान होता है। भाषा ज्ञान से भी पूर्व व दोनों साथ साथ हुआ करती हैं। भाषा न हो तो ज्ञान भी न हो। अतः वेदों जैसी भाषा मनुष्यों द्वारा उत्पन्न नहीं की जा सकती। वेदों की उत्पत्ति के बाद ऋषियों ने वेदों की सहायता से वेदों के अध्ययन में सहायक वर्णोच्चारण शिक्षा, वेद शब्दों के अर्थों का ग्रन्थ निघण्टु, वेदों के अर्थ जानने की प्रक्रिया के लिए अष्टाध्यायी, महाभाष्य व निरुक्त आदि ग्रन्थों की रचना की। इन ग्रन्थों की सहायता से वेदों का उच्चारण करने सहित वेद की भाषा व उसके शब्दों व मन्त्रों के अर्थ को जाना जा सकता है। आर्यसमाज के गुरुकुलों में वेदार्थ को जानने के लिए ही वर्णोच्चारण शिक्षा से आरम्भ कर अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निघण्टु व निरुक्त आदि का अध्ययन कराया जाता है। इनके अतिरिक्त भी व्याकरण ज्ञान में सहायक अन्य अनेक ग्रन्थ हैं जिनका गुरुकुलों के ब्रह्मचारियों को उनके आचार्य अध्ययन कराते हैं। वेद व्याकरण अष्टाध्यायी-महाभाष्य सहित निघण्टु व निरुक्त आदि का अध्ययन कर लेने पर विद्यार्थी व ब्रह्मचारियों में वेद मन्त्रों के पदच्छेद व अन्वय तथा स्वर व छन्दों के ज्ञान आदि के द्वारा उनका वेदार्थ करने की योग्यता आती है। इस प्रकार से सृष्टि के आदि काल से ही वेदों का पठन पाठन व प्रचार आरम्भ हुआ था जो आज भी जारी है और हम आशा करते हैं कि यह सृष्टि के शेष काल तक चलता रहेगा।

सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने वेदों का ज्ञान किनको व किस प्रकार से दिया इसका उल्लेख भी हम सत्यार्थप्रकाश के सातवें समुल्लास से अपने शब्दों में कर रहे हैं। ऋषि दयानन्द के अनुसार निराकार परमेश्वर ने सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक होने से चेतन जीवों को अपनी व्याप्ति से वेद विद्या का उपदेश किया अर्थात् वेदों का ज्ञान दिया। सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक होने से निराकार परमेश्वर को मुख व जिह्वा से वर्णोच्चारण करने की कुछ भी आवश्यकता व अपेक्षा नहीं है। ऋषि दयानन्द कहते हैं कि मुख जिह्वा से वर्णोच्चारण अपने से भिन्न को बोध कराने के लिये किया जाता है, अपने बोध के लिये नहीं। मुख जिह्वा के व्यापार करे विना ही मन में अनेक व्यवहारों का विचार और शब्दोच्चारण होता रहता है। कानों को बन्द करके यदि हम सुनें तो पाते हैं कि विना मुख, जिह्वा व तालु आदि स्थानों के कैसे कैसे शब्दों का व्यवहार चल रहा होता है। वैसे ही ईश्वर ने जीवों (चार ऋषियों) को अन्तर्यामीरूप से (वेदज्ञान का) उपदेश किया है। मुख से उच्चारण करने की आवश्यकता दूसरों को समझाने के लिए होती है स्वयं के लिए नहीं। परमेश्वर निराकार और सर्वव्यापक है। अपनी इस सामथ्र्य से परमेश्वर अपनी अखिल वेदविद्या का उपदेश जीव के बाहर-भीतर स्थित स्वरूप से जीवात्मा (ऋषियों) में प्रकाशित कर देता है। ईश्वर द्वारा जीवात्मा के भीतर उपदेश करने के बाद वह मनुष्य अपने मुख से उच्चारण करके दूसरों को सुनाते हैं। इसलिए ईश्वर में यह दोष नहीं आता कि ईश्वर मुख आदि इन्द्रियों के न होने वा निराकार होने से वेदों का ज्ञान मनुष्यों वा ऋषियों को नहीं दे सकता। ऋषि दयानन्द ने शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ के प्रमाण के आधार पर यह भी बताया है कि ईश्वर ने प्रथम, सृष्टि की आदि में, अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा ऋषियों के आत्मा में एक-एक वेद का प्रकाश किया था। मनुस्मृति ग्रन्थ के प्रमाण से ऋषि दयानन्द ने बताया है कि इन चार महर्षियों ने चारों वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराये। ब्रह्मा जी ने अग्नि महर्षि से ऋग्वेद, वायु महर्षि से यजुर्वेद, महर्षि आदित्य से सामवेद और महर्षि अंगिरा से अथर्ववेद को ग्रहण किया। ऋषि दयानन्द जी यह भी बतातें हैं कि चार महर्षि अग्नि आदि सबसे पवित्र थे इस लिये ईश्वर ने उन्हें ही वेदों का ज्ञान दिया। इससे परमात्मा पक्षपाती नहीं है। दयानन्द जी ने यह भी बताया है कि संस्कृत किसी देश विशेष की भाषा नहीं थी अपितु वेदभाषा अन्य सभी भाषाओं का कारण है। पाठक ऋषि दयानन्द के इन विचारों को सत्यार्थप्रकाश में देख सकते हैं।

हमने इस लेख में ईश्वर से वेदों की उत्पत्ति की चर्चा की है जो सत्य है तथा वेद एवं शास्त्रों से प्रमाणित होने सहित तर्क व युक्ति से भी सिद्ध होती है। वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक हैं। वेदों का जो महत्व है वह संसार के किसी अन्य ग्रन्थ का नहीं है। वेद ईश्वर से उत्पन्न हैं जबकि संसार में ऐसा कोई ग्रन्थ नहीं है जो ईश्वर से उत्पन्न हो और वह भी सृष्टि की आदि में। वेद अध्यात्म और भौतिक विद्याओं के आदि स्रोत व स्वतः प्रमाण ग्रन्थ हैं। वेद विश्व के सभी मनुष्यों के लिए माननीय, पठनीय व आचरणीय है। यही सन्देश ऋषि दयानन्द जी ने अपने समय में दिया और इसका प्रचार किया। इसी से मनुष्य अभ्युदय व निःश्रेयस की प्राप्ति कर सकता है। शास्त्रों एवं ऋषि दयानन्द का यह सन्देश आज भी प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**